वैदिक सोम

[ले०—श्री पं० धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड, गुरुकुल कांगड़ा]

वेदों में सोम शब्द हजारों बार आया है और ऋग्वेद के सम्पूर्ण नवम मण्डल और सामवेद के अधिकतर मन्त्रों का देवता अथवा प्रतिपाद्य विषय सोम है। साधारणतया प्रायः भाष्यकार इससे एक सोम नामक लताविशेष के रस का ग्रहण करते हैं जो मदकारक माना जाता है। पाश्चात्य अनुवादक उसका अनुवाद प्रायः Wine या शराब कर देते हैं। आजकल के अनेक शिक्षित और पाश्चात्यानुयायी भारतीय भी सोम को एक शराब ही समझते हैं, जिसका सेवन कर के प्राचीन लोग मस्त रहते थे। इसी भ्रम में सुप्रसिद्ध लेखक श्री कन्हैयालाल मुन्शी ने 'लोपामुद्रा' नामक ग्रन्थ में ऋषियों का एक सर्वथा कल्पित, अशुद्ध चरित्रचित्रण करते हुए लिखा है:—

"ऋषि चपटी नाक वाले, काले कलूटे दासदासियों से भीख माँगते और भेंट लेते, सोम रस पीकर नशे में चूर रहते, लोभ और क्रोध का प्रदर्शन करते और गौवें देने वाले की प्रशंसा करते थे।" इत्यादि (लोपामुद्रा भूमिका पृ० ९, १०)

वस्तुतः सोम के आध्यात्मिक, आधिभौतिक, आधिदैविक दृष्टियों से अनेक अर्थ को न जानने से ही यह भ्रान्ति उत्पन्न हुई है। एक विशेष ओषधिरस को ही सोम मान लेने वाले वास्तविक तत्त्वानभिज्ञ लोगों के विषय में ऋग्वेद १०।८१।३ में स्पष्टतया बताया गया है कि—

सोमं मन्यते पपिवान्, यत् संपिंषन्त्योषधिम्।
सोमं यं ब्रह्माणो विदुर्न तस्याश्नाति कश्चन॥

अर्थात्—जिस औषधि को पीसा जाता है उसके रस का पान करने वाला समझ लेता है कि मैंने सोम का पान कर लिया है किन्तु वस्तुतः ब्रह्मा—चतुर्वेदवेत्ता ज्ञानी लोग जिस सोम को जानते हैं, उसका कोई सेवन नहीं करता।

अथर्व वेद में यह मन्त्र थोड़े से भेद से निम्नरूप में १४।१।३ में पाया जाता है :—

सोमं मन्यते पपिवान् यत् संपिंषन्त्योषधिम्।
सोमं यं ब्रह्माणो विदुर्न तस्याश्नाति पार्थिवः॥

यहाँ ऋग्वेद के 'कश्चन' के स्थान में 'पार्थिवः' शब्द का प्रयोग है जो कश्चन के तात्पर्य को स्पष्ट करता है अर्थात् जो पार्थिव है पृथिवी के भोगों में तत्पर है, ऐसा कोई सोम के वास्तविक स्वरूप को नहीं जानता। वह सोम ओषधि के रस को ही पीकर अपने को सोमरस पान करने वाला मान लेता है। आध्यात्मिक सोम कोई और ही वस्तु है, जिसका भौतिक भोग परायण व्यक्ति अनुभव नहीं कर सकता।

सोम के अनेक अर्थ

वेद के अन्य शब्दों की तरह सोम शब्द के आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक दृष्टि से अनेक अर्थ हैं जिनका मैं इस लेख में संक्षेप से सप्रमाण निर्देश करना चाहता हूँ, ताकि विचारशील विद्वान् प्रकरणानुसार उस की यथोचित योजना कर सकें। सोम शब्द अध्यात्मदृष्टि से परमेश्वर का वाचक है जिसके लिये—

सोमो हि प्रजापतिः॥ (शत. ५.१.५.२६)
सोमो वै प्रजापतिः॥ (शत. ५.१.३.७)
यो वै विष्णुः सोमः सः॥ (शत० ३.३.४.२१; ३.६.३.१९)

इत्यादि प्रमाण अत्यन्त स्पष्ट हैं।

षु—प्रसवैश्वर्ययोः इस धातु से 'अर्तिस्तुसुहुसृधृक्षिक्षुभायावापदियक्षिनीभ्यो मन्' (उणा० १।१४०) से मन् प्रत्यय करने पर यह शब्द सिद्ध होता है। अतः सर्वोत्पादक और समस्त ऐश्वर्य-सम्पन्न होने के कारण परमात्मा को सोम कहते हैं।

निम्नलिखित वेदमन्त्रों में सोम का अर्थ परमेश्वर है, इसमें अणुमात्र भी सन्देह नहीं हो सकता।

त्वमिमा ओषधीः सोम विश्वास्त्वमपो अजनयस्त्वं गाः।
त्वमाततन्थोर्वन्तरिक्षं त्वं ज्योतिषा वि तमो ववर्थ॥
ऋ० १।९१।२२॥

अर्थात् हे सोम-परमेश्वर! तू ही इन ओषधि, वनस्पतियों, जलों और पृथिवी तथा गाय आदि पशुओं को उत्पन्न करता है। तू अन्तरिक्ष का विस्तार करता और अपनी ज्योति से अन्धकार को दूर करता है। क्या इस

प्रकार का वर्णन सोमवल्ली रस आदि पर चरितार्थ हो सकता है ?

सोमः पवते जनिता मतीनां
जनिता दिवो जनिता पृथिव्याः ।
जनिताग्नेर्जनिता सूर्यस्य
जनितेन्द्रस्य जनितात विष्णोः ॥ ऋ० ९।९६।५ ॥

यहां सोम को बुद्धियों का द्युलोक, पृथिवी लोक, अग्नि, सूर्य, विद्युत् और यज्ञादि का उत्पादक बताते हुए कहा है कि वह सबको पवित्र करता है। स्पष्टतया यह वर्णन परमेश्वरपरक है जो सर्वोत्पादक और पवित्र करने वाला है।

अयं पूषा रयिर्भगः सोमः पुनानो अर्षति ।
पतिर्विश्वस्य भूमनो व्यख्यद् रोदसी उभे ॥
ऋ० ९।१०१।७ ॥

इस मन्त्र में भी सोमपदवाच्य परमेश्वर को पूषा, रयि, भग आदि नामों से पुकारते हुए कहा है कि वह सारे विशाल विश्व का पति—स्वामी और रक्षक है और वह सबको पवित्र करता है।

पवस्व सोम महान् समुद्रः पिता देवानां विश्वाभि धाम ॥ ऋ० ९।१०९।४ ॥

यहाँ सोम को सम्बोधन करते हुए कहा है कि तू शान्ति, ज्ञान, आनन्दादि का (महान् समुद्रः) बड़ा समुद्र है तू (देवानां पिता) सूर्य चन्द्र नक्षत्रादि प्रकाशक पदार्थों और सत्यनिष्ठ ज्ञानियों का (पिता) पिता तथा रक्षक है (विश्वा धाम अभि) तू सब जगह व्यापक है। ऐसा तू हमें पवित्र कर।

विश्वा धामानि विश्वचक्ष ऋभ्वस
प्रभोस्ते सतः परियन्ति केतवः ।
व्यानशिः पवसे सोम धर्मभिः
पतिर्विश्वस्य भुवनस्य राजसि ॥
ऋ० ९।८६।५ ॥

अर्थात् हे सोम ! तू विश्वचक्षा—सर्वद्रष्टा और महान् सदा सत्स्वरूप प्रभु है, तू (विश्वा धामानि) सब जगह विद्यमान है। तेरे (केतवः) तेजकी किरणें सब जगह फैल रही हैं। तू अपनी (धर्मभिः) धारक शक्ति से (व्यानशिः पवसे) सर्वत्र व्याप्त हो कर पवित्र करता है। तू (विश्वस्य भुवनस्य राजसि) सारे संसार का राजा है।

क्या कोई मूर्ख से मूर्ख जंगली भी सोम नामक वनस्पति व ओषधि के विषय में ऐसी बातें कहने का साहस कर सकता है कि वह सर्वव्यापक, सूर्य, अग्नि, जल, वायु, पृथिवी सब का उत्पादक सर्वज्ञ और सारे संसार का स्वामी है ? कभी नहीं। अतः इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि वेद के इन तथा अन्य अनेक मन्त्रों में सोम शब्द सर्वोत्पादक शान्ति के स्रोत, परमेश्वर का वाचक है। अतः महर्षि दयानन्द जी सरस्वती ने ऋ. १,८९,३ आदि के भाष्य में सोम का अर्थ जो 'सृष्टिक्रमेण सर्वपदार्थाभिषवकर्ता शान्तः' यजु०, ४,२० के भाष्य में 'परमेश्वरः' और य० ७,२५ के भाष्य में 'सकलजगतः प्रसविता' यह जो लिखा है वह सर्वथा उचित और प्रमाणसंगत है। सायणाचार्यादि पौराणिक विचारों के भाष्यकारों ने यहाँ भी सोमलता रस आदि का ग्रहण कर लिया है, यह कितने आश्चर्य तथा दुःख की बात है ! सोम का अर्थ अध्यात्म-दृष्टि से परमेश्वर के अतिरिक्त ज्ञानमय भक्तिरस भी है। यह निम्न मन्त्रों से सर्वथा स्पष्ट है।

पवस्व मधुमत्तम इन्द्राय सोम क्रतुवित्तमो मदः ।
महि द्युक्षतमो मदः ॥ऋ० ९।१०८।१ ॥साम ५८२,६९२॥

यहाँ सोम को मधुमत्तम अर्थात् अत्यन्त माधुर्ययुक्त मस्ती उत्पन्न करने वाला कहा है, किन्तु वह शराब की तरह प्राकृतिक मस्ती नहीं अपितु उसे आत्मा के लिये (इन्द्राय क्रतुवित्तम) अर्थात् उत्तम ज्ञान को प्राप्त कराने वालों में श्रेष्ठ अथवा श्रेष्ठ संकल्प वा बुद्धि को (क्रतुरिति प्रज्ञानाम निघ.) प्राप्त कराने वालों में श्रेष्ठ, अत्यधिक यशस्वी बनाने वाली आध्यात्मिक मस्ती (महि द्युक्षतमो मदः) इस रूप में वर्णित किया गया है। उसे शराब आदि की तरह की कोई वस्तु समझ लेना भारी भूल है। सोम का वर्णन इन शब्दों में है कि—

शुचिः पावक उच्यते सोमः सुतस्य मध्वः ।
देवावीरघशंसहा ॥ ऋ० ९।२४।७ ॥ साम ९६७ ॥

अर्थात् यह सोम न केवल स्वयं पवित्र है, बल्कि दूसरों को भी पवित्र करने वाला (पावकः) और (मध्वः) माधुर्य से भारा हुआ (देवावीः) दिव्यगुणों को बढ़ाने वाला और (अघशंसहा) पापमयी भावनाओं का नाश करने वाला है।

यह स्पष्ट है कि यह वर्णन शराब जैसी मादक वस्तु

का नहीं किन्तु ज्ञानमय भक्ति के पवित्र और पावन आध्यात्मिक मद का यहाँ वर्णन है।

इसी प्रकार ऋग्वेद ९।९७।३६ और सामवेद मं० ८६१ का सोमविषयक वर्णन भी इस विषय में अत्यधिक स्पष्ट होने के कारण यहाँ उल्लेखनीय है, जिसमें कहा है:—

एवा नः सोम परिषिच्यमान
आपवस्व पूयमानः स्वस्ति।
इन्द्रमाविश बृहता मदेन
वर्धया वाचं जनया पुरन्धिम्॥

इसमें सोम को सम्बोधित करते हुए कहा है कि तू हमें सब ओर से पवित्र कर (आ पवस्व), अपनी बड़ी भारी मस्ती के साथ (इन्द्रमाविश बृहता मदेन) इन्द्र—जीवात्मा के अन्दर प्रवेश कर, हमारी वाणी की शक्ति को बढ़ा और (जनय पुरन्धिम्) हम में उत्तम बुद्धि को उत्पन्न कर।

बुद्धिनाशक शराब के विषय में इस प्रकार का वर्णन सर्वथा असंगत है। यह स्पष्टतया ज्ञानमय भक्तिभाव की आध्यात्मिक मस्ती का वर्णन है जो अत्युत्तम बुद्धि को उत्पन्न करती है और वाणी आदि की शक्ति को बढ़ा कर मनुष्य को पवित्र कर देती है।

ऋ० ९।१०८।३ तथा साम मं० ५८३, ९३८ का

त्वं ह्यङ्ग दैव्या पवमान जनिमानि द्युमत्तमः।
अमृतत्वाय घोषयः॥

यह सोम विषयक वर्णन भी इस प्रसङ्ग में अत्यधिक स्पष्ट होने के कारण उल्लेखनीय जिसमें कहा है कि हे सोम! तू (पवमान) सबको पवित्र करने वाला (द्युमत्तमः) अत्यन्त प्रकाशमान और मनुष्य जन्म को दिव्य बनाता हुआ उसके लिये अमृतत्व की घोषणा करता है। यह सोम—ज्ञानमय भक्तिभाव है, इसमें अणुमात्र भी सन्देह नहीं हो सकता। ऐसे ही।

शुक्रः पवस्व देवेभ्यः सोम दिवे पृथिव्यै शं च प्रजायै॥
ऋ० ९।१०९।५॥

दिवो धर्तासि शुक्रः पीयूषः सत्ये विधर्मन् वाजी पवस्व॥
ऋ० ९।१०९।६॥

ऋतेन य ऋतजातो विवावृधे राजा देव ऋतं बृहत्॥
ऋ० ९।१०८।८॥

तथा अन्य सैकड़ों मन्त्रों को उद्धृत किया जा सकता है जो स्पष्टतया सूचित करते हैं कि वेदों में सोम, परमेश्वर के अतिरिक्त ज्ञानमय भक्ति के आध्यात्मिक मद का भी सूचक है। इसे न समझ कर श्री कन्हैय्या लाल जी मुन्शी तथा अन्य विद्वानों का यह लिखना कि वह (भौतिक) सोम का रस पीकर नशे में चूर रहते थे, सर्वथा अशुद्ध है, इसमें सन्देह नहीं। इन उपर्युक्त मन्त्रों में सोम को ऋत अर्थात् सत्य और वेद से उत्पन्न सत्य के कारण ही प्रसिद्ध, ज्ञान को धारण करने वाला, दिव्य अमृत, पृथिवी, प्रकाश और सारी प्रजा के लिये शान्ति और पवित्रता का कारण बताया गया है। क्या कोई पागल से पागल व्यक्ति भी शराब जैसी वस्तु का ऐसा वर्णन कर सकता है।

श्री अरविन्द और सोम

सुप्रसिद्ध योगी श्री अरविन्द जी ने सोम का परमेश्वर और दिव्य आनन्द परक अर्थ 'वेदरहस्य' में बतलाया है। उन्होंने सोम—आनन्द व अमरता का अधिपति (Soma-Lord of Delight and Immortality इस शीर्षक के लेख में लिखा है कि कि "सोम आनन्द के रस का, अमृतरस का अधिपति है। सोम रस जो कि बाह्य यज्ञ में प्रयुक्त किया जाता है इसी आनन्द रस का प्रतीक है (वेदरहस्य पृ० १६२)। सोम आनन्द का अधिपति है। वह सच्चा रचयिता है जो कि आत्मा को धारण करता है और उस आत्मा में से एक दिव्य रचना को उत्पन्न कर देता है। उस के लिये मन और हृदय प्रकाशित कर छावनी बना दिये गये हैं; इसमें की चेतना सर्वविध संकीर्णता और द्वैध से युक्त होकर व्यापक रूप में विस्तृत कर दी गई है, ताकि वह इन्द्रियजीवन और मनोमय जीवन के पूर्ण प्रवाह को प्राप्त कर सके और इसे वास्तविक सत्ता के विशुद्ध आनन्द में, दिव्य आनन्द में, अमर आनन्द में परिणत कर सके।" (वेदरहस्य द्वितीय खण्ड पृ० १६२)

श्री अरविन्द जी के प्रधान विद्वान् शिष्य श्रीकपाली शास्त्री जी ने अपनी ऋग्भाष्यभूमिका में सोम के विषय में लिखा है:—

'अत्र सोमः। अयं च लताविशेषः बाह्यो भाव इत्यसंशयम्। अत्रापि याज्ञिकः संकेतरूप एवायम् अन्तर्थगम्यस्य चिदानन्दक्षरणस्वभावस्य देवस्येति क्वचिद् विशदं भवति मन्त्रेषु। बाह्यपक्षे तु बहुत्र मन्त्रा असंगतार्था

एव भवन्ति। अन्तरर्थेनैव सर्वत्र सोममन्त्राणां सामञ्जस्यं लक्ष्यते—

विश्वा धामानि विश्वचक्ष ऋभ्वसः
प्रभोस्ते सतः परियन्ति केतवः।
व्यानशिः पवसे सोम धर्मभिः
पतिर्विश्वस्य भुवनस्य राजसि॥

ऋ० ९।८६।५॥

कथमयं मन्त्रः सोमलतापरत्वेन व्याख्यातुं शक्यः? स्वयं विचार्यतां मतिमद्भिः, अस्यायमर्थः—(विश्वचक्षः) सर्वार्थदर्शिन्! सोम (प्रभोः) परिवृढस्य (सतः) (वे) तव (ऋभ्वसः) महान्तो द्रष्टारः (केतवः) प्रज्ञापका रश्मयः (विश्वा) सर्वाणि (धामानि) तेजःस्थानानि देवशरीराणि (परियन्ति) परितो गच्छन्ति प्रकाशयन्तीत्यर्थः। हे सोम (व्यानशिः) व्यापनशीलस्त्वं (धर्मभिः) धारकैः रसपदवाच्य-आनन्दनिष्यन्दैः (पवसे) क्षरसि। (विश्वस्य भुवनस्य पतिः) स्वामी त्वं (राजसि) ईश्वरो भवसि इत्ययमर्थः सायणभाष्यानुसारेणैव प्राप्तो भवति। एतावतोक्तेनापि यदि सोमविषये सन्देहो न व्यपेतो भवेद्, अन्यो मन्त्रः संशयच्छेदको दशममण्डलस्थो जागर्ति—

सोमं मन्यते पपिवान् यत् संपिंषन्त्योषधिम्।
सोमं य ब्रह्माणो विदुर्न तस्याश्नाति कश्चन।'

ऋ० १०।८५।३॥

अस्मिन् मन्त्रे वस्तुतः सोमस्वरूपस्य निर्णयः कृतः। सामान्यतः सर्वोऽपि सोमलतापेषणेन रसमादाय पानं कुरुते, यं वस्तुतत्त्वज्ञाः तात्त्विकं सोमं विदुः तस्य भोक्ता दुर्लभ इति ह्यस्या ऋचोऽभिप्रायः॥ (श्रीकपालिशास्त्रिकृता ऋग्भाष्यभूमिका पृ० ८०)

मैंने स्वयं लेख के पूर्व भाग में 'विश्वा धामानि विश्वचक्षः' तथा 'सोमं मन्यते पपिवान्' इन दोनों मन्त्रों का उल्लेख किया है और कपाली शास्त्री जी ने उनका उल्लेख करते हुए ठीक ही कहा है कि सोमलता रूप बाह्यपक्ष में ऐसे मन्त्रों की संगति कभी नहीं लग सकती। अतः सोमलतादि को दिव्य आनन्द का प्रतीक मानकर मन्त्रों की संगति लगानी चाहिये। सरल संस्कृत होने के कारण विस्तारभय से सारे सन्दर्भ का अनुवाद देना अनावश्यक है।

सोम का आधिभौतिक अर्थ

आधिभौतिक वा सामाजिक दृष्टि से सोम शब्द का प्रयोग वेदों में सौम्य-गुणयुक्त विद्वान् के लिये किया गया है। यह बात अनेक मन्त्रों से स्पष्ट है, जहाँ उसके लिये कवि शब्द का पचासों स्थानों पर प्रयोग पाया जाता है। उदाहरणार्थ—

आपवस्व मदिन्तम पवित्रं धारया कवे।
अर्कस्य योनिमासदम्॥ ऋ० ९।५०।४॥ (साम मं० १२०८॥
९।९२।३ में कहा है—

प्र सुमेधा गातुविद्विश्वदेवः
सोमः पुनानः सद एति नित्यम्।
भुवद्विश्वेषु काव्येषु रन्ताऽनु
जनान् यतते पञ्च धीरः॥

यहाँ बताया गया है कि सोम (सुमेधाः) उत्तम बुद्धि-सम्पन्न है, वह (गातुवित्) श्रेष्ठ धर्म मार्ग का जानने वाला और (विश्वेषु काव्येषु रन्ता भुवत्) सब काव्यों में रमण करने वाला—उनका मनन करने वाला (पुनानः) सबको पवित्र करने वाला होकर (नित्यं सद एति) नित्य सभाओं में आता है और (धीरः) धैर्यशाली होकर (पञ्च जनान् अनुयतते) ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, निषाद सबके कल्याण के लिये प्रयत्न करता है। यह वर्णन सोमलता परक तो हो ही नहीं सकता, न यह परमेश्वर वा ज्ञानमय भक्तिरस परक है। यह तो स्पष्ट शान्त विद्वान् का वर्णन है जिसे मान्य गुरुवर पं० बुद्धदेव जी विद्यामार्तण्ड के शब्दों में गुरुकुल का स्नातक कह सकते हैं। ऋ० ९,१३,२; ९,१८,२; ९,४०,१; ९,६५,२९; ९,६६,८; ९,८४,५; ९,९७,३७; ९,१०७,६; ८,७९,१ इत्यादि में सोम के लिये 'विप्रः' इस शब्द का प्रयोग किया गया है जिसका अर्थ निघण्टु ३,१५ (विप्र इति मेधाविनाम) के अनुसार मेधावी है। ऋ० ९,११३,४ में सोम के लिये 'सत्यं वदन्' इस विशेषण का प्रयोग है। उसी मन्त्र में उसे सत्यकर्मा कहा गया है। क्या ये विशेषण कभी सोमलतादि पर घट सकते हैं कभी नहीं। ऋ० ९, ६, ८ में सोम के विषय में कहा है कि 'सुष्वाणः। सुतः प्रत्नं निपाति काव्यम्। वह स्वयं सुत है और सत्त्व खींच कर सनातन काव्य अर्थात् वेदवाणी की रक्षा करता है। ऋ० ९,१२,४ में कहा है 'विचक्षणः सुक्रतुः कविः सोमः' अर्थात् सोम उत्तम कर्म करने वाला विचक्षण चतुर कवि है।

ऋ० ९, १३, ३ में कहा है कि 'गृणाना: सोमा: पवन्ते। अर्थात् उपदेश देने वाले सोम—शान्त विद्वान् संसार को पवित्र करते हैं। बहुवचन में सोम का प्रयोग तो शान्त विद्वानों के लिये इतना अधिक स्पष्ट है कि किसी मूर्ख को भी उस में सन्देह नहीं हो सकता। उदाहरणार्थ ऋ० ९, १०१, १० अथवा सामवेद मं० ५४८, ११०१ के निम्न मन्त्र को देखिये।

सोमा: पवन्त इन्दवोऽस्मभ्यं गातुवित्तमा:।
मित्रा: सुवाना अरेपस: स्वाध्य: स्वर्विद:॥

इस में सोमों के विषय में कहा है कि वे (इन्दव:) चन्द्र की तरह आह्लादक अथवा सरस हृदय वाले हैं। (अस्मभ्यं गातुवित्तम:) वे हमारे लिये धर्म अथवा सत्य मार्ग को प्राप्त कराने वालों में उत्तम हैं। (मित्रा:) वे सब को मित्र की प्रेममय दृष्टि से देखने वाले (सुवाना:) उत्तम भाषण करने वाले (अरेपस:) पापरहित (स्वाध्य:) उत्तम रीति से ध्यान करने वाले अथवा श्रेष्ठ बुद्धि और कर्मों वाले (स्वर्विद:) सुख को प्राप्त कराने वाले होकर (पवन्ते) हमें पवित्र करते अथवा गति करते हैं। सोमों का यह वर्णन स्पष्टतया सूचित करता है कि उनसे सौम्य स्वभाव के, निष्पाप, प्रेममय दृष्टि से सब को देखने वाले विद्वानों का ग्रहण है। ये विशेषण सोमवल्ली आदि पर तो कभी चरितार्थ हो ही नहीं सकते।

ऋ० ९, १०१, १२ और साम ११०२ में सोमों के पूता:, विपश्चित:, सूर्यासो न दर्शतास: इत्यादि विशेषणों का प्रयोग हुआ है जिनका अर्थ पवित्र, विद्वान्, सूर्यकिरणों के समान दर्शनीय इत्यादि है।

ब्राह्मणग्रन्थों में सोम के अनेक अर्थ

अब मैं ब्राह्मण ग्रन्थों में सोम के जो अनेक अर्थ बताये गये हैं उनका निर्देश करता हूँ, ताकि मन्त्रों के अर्थ का निश्चय करने में सहायता मिल सके। इनमें आध्यात्मिक, आधिभौतिक अर्थों के अतिरिक्त कई आधिदैविक अर्थ भी हैं। उदाहरणार्थ-सत्यं वै श्रीर्ज्योति: सोम:। (शत० ५, १, २, १०; ५, १, ५, २८) यहाँ सोम से ज्योति का ग्रहण किया गया है। श्रीर्वै सोम:। (शत० ४, १, ३, ९) यहाँ सोम से श्री अर्थात् ऐश्वर्य अथवा शोभा का ग्रहण किया गया है। राजा वै सोम:। (शत० १४, १, ३, १२) में सोम का अर्थ राजा बताया गया है क्यों कि सोम शब्द षु प्रसवैश्वर्ययो: से बना है। उसके ऐश्वर्य आदि अर्थ को लेकर राजपरक अर्थ किया गया है। सोमो हि प्रजापति:। (शत० ५, १,५, २६) सोमो वै प्रजापति: इत्यादि के अनुसार प्रजा के स्वामी परमेश्वर के लिये सोम शब्द का प्रयोग है। 'यो' वै विष्णु: सोम: स:। (शत० ३, ३, ४, १) अर्थात् विष्णु—सर्वव्यापक परमेश्वर को ही सोम के नाम से पुकारा गया है। योऽयं वायु: पवत एष सोम:। (शत० ७, ३, १, १) यहाँ सोम का एक अर्थ वायु बतलाया गया है। सोमो वै चतुर्होता। (तैत्ति० २, ३, १, १) के अनुसार चारों वेदों से यज्ञ कराने वाले ब्रह्मा को भी सोम कहते हैं। एष वै यजमानो यत् सोम:। (तैत्ति० १, ३, ३, ५) के अनुसार यजमान को भी सोम कहते हैं। वर्च: सोम:। (शत० ५,२, ५, १) इसमें वर्च को सोम कहा गया है। क्षत्रं सोम:। (ऐत० २, ३८। कौषी० ७, १०, ९, ५) क्षत्रं वै सोम:। के अनुसार क्षात्र शक्ति को भी सोम कह सकते हैं।

यशो वै सोम:। (शत० ४, २, ४, ९) यशो वै सोमो राजा। (ऐत० १, १३) सोमो वै यश:। (तैत्ति० २, २, ८, ८) इत्यादि के अनुसार कहीं २ यश के लिये भी सोम शब्द का प्रयोग हुआ है। रेत: सोम:। (कौषी० १३।७॥ तैत्ति० २, ७, ४, १॥ शत० ३, ३, २, १॥ ३, ३, ४, २८) इत्यादि प्रमाणानुसार सोम से वीर्य का भी ग्रहण होता है और इसी लिये वीर्यवान् ब्रह्मचारी वा स्नातक के लिये विशेष रूप से आधिभौतिक दृष्टि से सोम शब्द का प्रयोग होता है। प्राण: सोम:। (शत० ७।३।१।२) प्राणो हि सोम:। (ताण्ड्य० ९।९।१।५) इत्यादि के अनुसार प्राण के लिये भी सोम शब्द का प्रयोग वैदिक साहित्य में होता है। रस: सोम:। (शत० ७।३।१,३) तद् यत् तदमृतं सोम: स:। इत्यादि के अनुसार ज्ञानमय भक्तिरस वा भक्ति अमृत के लिये भी सोम शब्द का प्रयोग वेदों में किया गया है, जैसे कि इस लेख में अनेक मन्त्रों को उद्धृत करते हुए बताया गया है। ऋ० १।८४।४ और साम मं० ९४९ का यह मन्त्र भी इस विषय में अत्यन्त स्पष्ट होने के कारण उल्लेखनीय है—

इममिन्द्र सुतं पिब ज्येष्ठममर्त्यं मदम्॥

अर्थात् हे (इन्द्र) जीवात्मन्! तू (इमम्) इस (सुतम्) अभ्यास वैराग्यादि द्वारा उत्पादित (ज्येष्ठम्) सबसे बड़े (अमर्त्यं) अमर, कभी न नष्ट होने वाले

आध्यात्मिक (मदम्) मस्त करने वाले ज्ञानमय भक्तिरस का (पिब) पान कर। सोमः पयः। (शत० १२।७।३। १३) तथा आपः सोमः सुतः। (शत० ७।१।१।२१) आदि के अनुसार सोम शब्द का प्रयोग दुग्ध अथवा जल के लिये भी वेदों में कहीं २ होता है। सोमो वै दधि। (कोषी० ८।९) के अनुसार दही के लिये भी सोम शब्द का कहीं २ प्रयोग होता है। अन्नं सोमः। (कौषी० ९।६ ॥ शत० ३।३।४।२८ ॥ ताण्ड्य० ६।६।१) आदि के अनुसार उत्तम अन्न के लिये भी सोम शब्द का प्रयोग हो जाता है। तै० १।३।२।२ सोम को देवों का परम अन्न कहा गया है। (एतद् वै देवानां परममन्नं यत् सोमः)। इसी को कोषी० १३।७ में एतद् वै परममन्नाद्यं यत् सोमः। इस रूप में कहा गया है। शत० ११।५।६।६ में साम मन्त्रों को देवों की सोमाहुति कहा गया है सोमाहुतया ह वा एता देवानां यत् सामानि। अथ सोमाय वनस्पतये। (शत० ५।३।३।४) सोम वीरुधां पते। (तै० ३।११।४।१) ओषधा हि सोमो राजा। (ऐत० ३।४०) सोम ओषधीनाम् अधिराजः। (गोपथ उ० १।१७) सोमो वै राजौषधीनाम्। (कौषी० ४।१२॥ तैत्ति० ३।७।१७।१) इत्यादि के अनुसार सोम ओषधियों का अथवा वनस्पतियों का राजा है। अनेक प्रकार के रोगों के निवारण और शक्ति-सम्पादन के लिये इसका सेवन किया जाता है।

> स्वादुष्किलायं मधुमाँ उतायं
> तीव्रः किलायं रसवाँ उतायम्।
> उतो न्वस्य पपिवांसमिन्द्रं
> न कश्चन सहत आहवेषु॥
>
> ऋ० ६। ४७। १ ॥ अथर्व० १८। १। ४८ ॥

इस मन्त्र में सोम लता के रस का बासरूप से वर्णन है कि यह सोम रस स्वादु है, मधुर है, तीव्र और रसयुक्त है। इसका पान करने वाले इन्द्र–राजा–सेनापति आदि को युद्धों में कोई परास्त नहीं कर सकता।

इनके अतिरिक्त सोमो वै ब्राह्मणः। (ताण्ड्य २३। १६। ४) सौम्यो हि ब्राह्मणः। (तैत्ति० २। ७। ३। १) पुमान् वै सोमः। (तैत्ति० १। ३। ३। १) इत्यादि के अनुसार प्रधानतया शान्त स्वभाव वाले ब्राह्मण और सामान्यतया कई स्थानों पर अन्य पुरुषों के लिये भी सोम शब्द वेदों में प्रयुक्त होता है।

> सोमो वधूयुरभवदश्विनास्तामुभा वरा।
> सूर्यां यत् पत्ये शंसन्तीं मनसा सविताददात्॥
>
> ऋ० १०।८५।९॥

इत्यादि में सोम से वीर्यवान् पुरुष का ग्रहण है जिसका पति की कामना करने वाली सूर्यवत् कान्तिमती कन्या के साथ (सविता) कन्या का पिता विवाह कर देता है; इत्यादि वर्णन सूर्या सूक्त में आया है।

महर्षि दयानन्द कृत सोम के अनेकार्थ

अब मैं महर्षि दयानन्द ने अपने वेदभाष्य में वेदों और ब्राह्मण ग्रन्थादि के अनुसार सोम के जो अनेकार्थ किये हैं उनका निर्देश करता हूँ, जिससे यह स्पष्ट है कि महर्षि दयानन्द जी सरस्वती आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक दृष्टि से इस सोम शब्द के अनेकार्थ मानते थे।

आध्यात्मिक दृष्टि से :—

(१) परमेश्वरः—सकलजगतः प्रसविता य० ७। २५। सृष्टिक्रमेण सर्वपदार्थाभिषवकर्ता शान्तः ऋ० १। ८९। ३। सोमः = परमेश्वरः य०। ४। २०॥

(२) वीररसादिकः॥ ऋ० १। ४७। ३॥

(३) योगैश्वर्यवृन्दः॥ य० ७। ९॥

(४) शरीरात्मबलम्॥ य० ३४। २१॥

आधिभौतिक दृष्टि से:—

(१) प्रेरको विद्वान्॥ ऋ० ६। ३८। ४॥
धर्मप्रेरकः॥ ऋ० १। १११। ९॥

(२) मृदुगुणवर्धकः॥ य० ८। १॥

(३) ऐश्वर्यमिच्छुः॥ य० ९। ३१॥

(४) शुभगुणप्रसिद्धः॥ य० १०। १८॥
ऐश्वर्यवान्, सत्याचारे प्रेरकः॥ य० ३४। २१॥

(५) उत्तमरससम्पादकः, पदार्थविद्यास्वीकारकः ऐश्वर्ययुक्तं राज्यं वा॥ य० ४। २४॥

(६) प्रशस्तगुणः शिष्यः॥ य० ७। १४॥

(७) सर्वसुखप्रापकः सभाध्यक्षः॥ १। ३४। ७॥

(८) सर्वसुहृत् सौहार्दप्रदो वा॥ ऋ० १। ९१। ८॥
सौम्यगुणसम्पन्नो राजा॥ य० ७। २१॥

(९) ऐश्वर्यगुणविशिष्टो गृहाश्रमः॥ य० ८। ४९॥

आधिदैविक दृष्टि से:—

(१) सोमलतादिसमूहरसः॥ ऋ० १। १८। ४॥

सर्वरोगनाशको बलपुष्टिबुद्धिवर्धक उत्तमोषध्य-
भिषवः ॥ ऋ० १ । २८ । ९ ॥

(२) ऐश्वर्यप्रदः पदार्थसमूहः ॥ ऋ० १ । ८० । २ ॥

(३) जलम् ॥ ऋ० ५ । ३४ । ३ ॥

(४) बहुत सुख को उत्पन्न करने वाला पवन ॥
ऋ० १ । ९४ । ५ ॥

(५) महौषधिविशिष्टमन्नम् ॥ ऋ० ३ । ४० । ५ ॥

(६) सूयन्ते यस्मिन् स संसारः ॥ ऋ० ३ । ४७ । ३ ॥

(७) ओषधिजन्यो घृतदुग्धादिरसः ॥ ऋ० ३ । ४७ । ४ ॥

(८) सोतव्यः सर्वः पदार्थो विमानादियानं वा ॥

(९) चन्द्रः ॥ ऋ० ३ । ६१ । २ ॥

इस प्रकार सोम के आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक दृष्टि से २२ अर्थ महर्षि दयानन्द ने अपने वेद-भाष्य में किये हैं जिनका प्रकरणानुसार उपयोग करने से वेदमन्त्रों का ठीक अर्थ ज्ञात हो सकता है और अनेक प्रकार के भ्रमों से विद्वान् बच सकते हैं ॥